आज के शंकाराचार्य जानें कि हमारे वेदमंत्र क्या हैं?

(गतांक से आगे)

।। दोष मनु का है।।

भारत में जातिवाद का विष फैलाने का सबसे पहला प्रचार शायद मनु ने मनुस्मृति लिखकर किया था जिसका इतना भद्दा रूप हमें शंकराचार्य में दिखलाई पडता है। पर मनु ने तो अध्याय १, श्लोक ५८ तक ही लिखा है – इसके बाद का समूचा लेखन मृत्यु का है, प्रमाण देखिये–

''एतद्वाडयं भृगः शास्त्रं आवयिष्यत्य शेषतः।
एतद्वि मत्तोऽधिजगे सर्व मेषोऽशिलं मुनि।।

मनु. १/५/९

तथा

इत्यतन्मानव शास्त्रं भृग प्रोक्तं पठन् द्विजः।
भवत्याचारवान्नित्यं यथेष्टां प्राप्नुयाद गतिम।।

मनु. १२/१२६

अर्थात भृगु जी इस शास्त्र को आदि से लेकर अंत तक आप लोगों को सुनायेंगे, क्योंकि उन्होंने इससे संम्पूर्ण शास्त्र भली प्रकार पढा है। इस प्रकार भृगु – कथित इस मानवशास्त्र को नित्य पढने वाला द्विज आचारवान हो जाता है और स्वर्गापवर्ग रूप अभिष्ट गति को पा जाता है। ''हिंदू जाति का उत्थान और पतन'' पुस्तक के लेखक श्री. रजनीकांत शास्त्री जैसे विद्वान कहते हैं कि यह श्लोक मनुस्मृति का अन्तिम – श्लोक है जिसपर वह समाप्त हो जाती है। अतः यदि भृगु स्वकथित इस मानव शास्त्र में अपनी बिरादरी के फायदे के लिये अपनी ओर से नमक – मिर्च मिला दिये हैं तो इसमें आश्चर्य क्या है ? क्योंकि यह वही घमंडी – ब्राम्हण भृगु हैं जिन्होंने गोरे चिट्टे आर्य होने के गर्व से काले – कलूटे विन देवता (= विष्णु) की छाती पर अकारण पदाघात किया था और भोले – शंकर को उलटी सीधी गालियाँ बकी थी। यह वही दर्पी भृगु हैं जिन्होंने एक वीतिवही नामक क्षत्रिय सम्राट को इसलिये ब्राम्हण बना लिया था कि वह किसी राजा के डर से भृगु की कुटिया में कुछ दिनों छिपा पडा रहा था। भृगु उसी कोटि के गर्वीले – ब्राम्हण थे जो यह कहते थे कि विष्णु केवल गो और ब्राम्हणों की रक्षा करने के लिये ही बार बार अवतार धारण करते हैं। ऐसे ब्राम्हणों को देखकर गुरु नानक ने एकबार कहा था ''अब के बामन खोटे'' पर पर मै कहता हूँ कि गुरु नानक का यह वाक्य तो आज के ब्राम्हणों पर भी ज्यों का त्यों फिट बैठता है। पतित – ब्राम्हणों के लिये मनु स्मृति (४/१९०) में लिखता है।

''अपतास्त्वनधी यानः प्रति ग्रहरुचिर्ध्दिजः।
अप्लस्यश्माप्लवेनैव सहतेनैव मज्जति।''

अर्थात – जो ब्राम्हण वेदादि – शास्त्रों को पढने और तपस्या करनेवाला नहीं है वह यदि प्रतिग्रह करे तो प्रतिग्रह के साथ ही उसका नाश वैसे ही हो जाता है, जैसे पत्थर की नाव अपने आरोही के साथ जल मे डूब जाती है।

मुझे यहाँ यह समझाने की जरुरत कदाचित नही पडेगी कि आज के शंकराचार्य 'प्रतिग्रह – प्रवृत्त' अर्थात याचक हैं या नहीं। क्योंकि पुरोहिताई करने वाला ब्राम्हण ही प्रतिगह प्रवृत्त कहलाता है जिस बेचारे को न वेद पढने की फुरसत है न तपस्या करने का समय ही मिल पाता है। ऐसा ब्राम्हण तो सचमुच दया का पात्र ही होता है।

।। उपसंहार।।

वेद भगवान के वाँडमय – शरीर के प्रतीक हैं इसीलिये महान वेदभाष्याकार महर्षि यास्क ने कहा था कि नास्तिक वह नहीं है जो कि भगवान को नही मानता वरना नास्तिक तो उसे समझाना चाहिऐ जो कि वेदों को नहीं मानता, इसीलिये वेद विरुध्द जैन और बौध्द धर्म आजतक नास्तिक – धर्म माने जाते हैं। और यह धर्म चारुवाक की श्रेणी में चले जाते हैं। भारतीय परम्परा में वेद सर्वोपरि हैं, जिनकी अवहेलना किसी को भी

मंजूर नहीं है। और इसीलिये शुध्द और सनातन आर्य परम्परा ने आदि शंकराचार्य का मूल्यांकन करते हुये उन्हें ''प्रच्छन्न – बौध्द'' तक कह दिया है। यह विवरण महापण्डित राहुल सांकृत्यायन ने अपनी विश्व – विश्रुत – पुस्तक ''दर्शन दिग्दर्शन'' के पृष्ट २८०–८२१ पर इन शब्दों में पेश किया हैं, जो कि पढने योग्य है।

।। प्रच्छन्नबौध्द।।

शंकर के दर्शन को सरसरी – नजर से देखने पर मालूम होगा, कि वह ब्रम्हवाद को मानता है और उपनिषद् के अध्यात्मक – ज्ञान को सबसे अधिक प्रधानता देता है, किन्तु, जब उसके भीतर घुसते हैं, तो वह नागार्जुन के शून्यवाद का यामावाद के नाम से नामान्तर – मात्र है। यह बात इससे भी स्पष्ट हो जाती है कि, उसकी आधार – शिला रखने वालेगौडपाद सीधे तौर से बुध्द और नागार्जुन के दर्शन के अनुयायी थे, और शंकर के अनुयायियों में सबसे बडे – अनुयायी श्रीहर्ष का 'खंडन खंडखाद्य' सिर्फ सीता राम के मंगलचरण तथा दो चार मामूली बातों के ही कारण शुध्द माध्यमिक – दर्शन (= शून्यवाद) का ग्रन्थ कहे जाने से बचाया जा सकता है। इसीलिये कोई ताज्जूब नहीं, यदि परांकुशदास ''व्यास'' ने कहा

''वेदोऽनृतो बुध्दकृता गमोऽनृतः,
प्रामाण्यमेतस्य च तस्य चानृतम।
बौध्दाऽनृतो बुध्दिफले तथाऽनृते,
यूयं च बौध्दाश्च समानसंसदः।।''

(देखियेः रामानुज के वेदांत – भाष्य की टीका ''श्रुतप्रकाशित'' ।) ''(शंकरानुयायियों ! तुम्हारे लिये) वेद (परमार्थतः) अनृत (= असत) हैं (वैसे ही शुन्यवादी बौध्दों के लिये) बुध्द के लिये उपदेश अनृत हैं, (तुम्हारे लि इस (=वेद) का और (उनके लिये)उस(=वुध्द–आगम) का प्रमाण होना गलत है। (हम दोनों के लीए)बौध्दा (= ज्ञाताजीव) अनृत है, (उसी तरह) बुध्दि (= ज्ञान) और (उसका) फल (= मुक्ति) भी अनृत है, इस प्रकार तुम और बौध्द एक ही भाई – बिरादर हो।''

इसलिये शंकर 'प्रच्छन्न बौध्द'' कहे जाते हैं।''

(देखियेः 'दर्शन दिग्दर्शन'' का किताब महल इलाहाबाद से प्रकाशित राहुल सांकृत्यायन कृत सन १८४७ वाला संस्करण) जब आदिशंकराचार्य ही ऐसे थे तब उनके ये आधुनिक मठाधीश वैसे क्यों न होंगे जो कि वेदो का लवादा ओठे हुये बौध्दभिक्षु का सा मनसा – वाचा – कर्मणा' जीवन बिताते होंगे।

।।इतिशुभम्।। ■

श्री रामेश्वर [illegible] नगर, दिल्ली